National Journal of Multidisciplinary Research and Development
www.multidisciplinaryjournal.org
ISSN: 2455-9040
Received: 31-01-2023, Accepted: 15-02-2023, Published: 04-03-2023
Volume 8, Issue 1, 2023, Page No. 44-47

वर्तमान राजनैतिक परिदृश्य मे भाषाई अस्मिता का प्रश्न

आशुतोष कुमार
सेंटर फॉर साउथ एशियन स्टडीज, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

सरांश
भारत की विविधता का वर्णन प्रोफेसर आशुतोष वार्षणय ने "मेलटींग पॉट" की तरह ना कर "सलाद बॉउल" की तरह की है, ये वर्णन भारतीय विविधता को विशिष्ट पहचान देती है। भाषाई विवधता इन्ही मे से एक है जो वर्तमान राजनीति मे एक शक्ति के रूप मे प्रतिबिंबित होती है, फलस्वरूप भाषा एक मात्र संचार संवाद का साधन ना रह वैश्विक राजनीति का भी एक केन्द्रीय विंदु बन जाता है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिन्दी के संदर्भ मे लिखे है की "निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल। । निज भाषा के रूप मे हिन्दी तथा विभिन्न बोलियों पर की जा रही राजनीति भी इस आलेख मे वर्णित है। भाषा के सृजनात्मक शक्ति के कारण भाषा के महत्व विशेष हो गया है इसलीय भाषा राजनीति का केन्द्रीय तत्व बन गया है। भाषा की प्राथमिकता मे कुछ ही भाषा को उच्च स्थान दिया जाता है जिससे विभिन्न बोलियों की अस्मिता संकट मे आ जाती है तथा यह सामाजिक पदसोपनीयता का मार्ग भी प्रशस्त करती है । भाषा का प्रश्न वैश्विक राजनीति मे भी अमित छाप छोड़ रहा है। अतः भाषा की व्यापकता, इसकी गूढ़ता तथा अस्मिता हेतु समवेशिक राजनीति अत्यंत आवश्यक है ताकि सबका साथ और सबका विश्वास की संकल्पना चरितार्थ हो ।

मूलशब्दः वैश्विक राजनीति, सलाद बॉउल, लोकतंत्र, अल्पसंख्यक, संविधान, वर्चस्ववादी, पदसोपान, भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, प्रवासी, सामयिक, महाशक्ति, सृजनात्मक

भाषा के माध्यम से मनुष्य मे चेतना का विकास होता है । चेतना लोकतंत्र के संरक्षण तथा संवर्धन हेतु आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है । इस प्रकार भारतवर्ष का लोकतान्त्रिक स्वरूप के कारण भाषा प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष रूप से राजनीति को प्रभावित करती है अतः भाषा राजनीति की वाणी भी है, राजनीति की व्यवहार भी है और राजनीति की संस्कार भी । इस बात से बिल्कुल भी इनकार नहीं किया जा सकता है की भाषा सीखने तथा इसके प्रयोग करने का अधिकार कहीं न् कहीं शिक्षा और जीवन के अधिकार जैसे मौलिक अधिकार से जुड़ा हुआ है।राजनीति मे राजनीतिज्ञों द्वारा भाषा का प्रयोग बहोत ही सावधानीपूर्वक किया जाता है क्योंकि उनका मानना होता है की विचारों को प्रभावशाली बनाने हेतु सम्यक भाषा आवश्यक है (Ali, 2011)[1]। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आशा सारंगी का मानना है की समाचार पत्र की प्रकाशन 97 भाषाएं मे, प्राथमिक शिक्षा 67 भाषाएं मे, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन 80 भाषये मे और ऑल इंडिया रेडियो 22 भाषये मे संचालित हो रही है तो फिर संविधान के अंतर्गत 22 भाषये ही क्यों (Sarangi, 2008)[11] ? भाषा एक सामाजिक तत्व है । सामाजिक तत्व समाज को एक साथ बांध कर रखने का कार्य करता है । इस सामाजिक तत्व को कोई एक व्यक्ति बदल नहीं सकता है। भाषा को बदलने का अर्थ होता है पूरी सामाजिक संबंध को बदल देना (Joseph, 2006)[6]। राजनीति मे किसी एक भाषा को तबजजों देना भाषाई वर्चस्वता को जन्म देता है जो अन्य भाषाई समूहों के साथ वैमानस्था का कारण सिद्ध होता है। श्रीलंका के अंदर तमिल और सिंघली के बीच, पश्चिम और पूर्वी पाकिस्तान मे बांग्ला और उर्दू के बीच, बेल्जियम मे डच और फ्रेंच के बीच, कनाडा मे इंग्लिश और फ्रेंच के बीच भाषाई विवाद है जो वह की राजनीति को ज्वलंत बनाए रखता है। बहुत लोगों के द्वारा जो अंग्रेजी वाच्य लोग है, वे हिन्दी भाषा की आलोचना करते है। इन लोगों की इस अर्थ मे आलोचना की जाती है की ये भारत की एकता को विभाजित करने का प्रयास कर रहे है इसिलिय भाषगत विभेदित राजनीति कर रहे है (Bhardwaj, 2023)[2]। राजनीति जनता तथा नेता के मध्य का संबंध है। जनता से संपर्क हेतु नेताओ के द्वारा भाषा का प्रयोग इस प्रकार होता है की नेता जनता की मन और मस्तिष्क दोनों तक पहुच सके।

एटेनिओ ग्रामशी के अपनी पुस्तक द प्रिजनर नोटबुक मे "Vernacular Materialism" शब्द का प्रयोग किया है। ग्रामशी का मानना है की grammar के दो प्रकार होता है 1.Imminent grammar 2. Normative grammar (नॉर्मटिव) । नॉर्मटिव मे वर्चस्ववादी शब्दों का प्रयोग होता है। जिसके आधार पर पूंजीपति वर्ग के द्वारा सर्वहारा वर्ग के ऊपर शब्दों के जाल से वर्चस्व स्थापित किया जाता है। उनका यह भी कहना है की वर्चस्वता सिर्फ बल का प्रयोग और सहमति के निर्माण तक ही नहीं है बल्कि वर्चस्वता मे महत्वपूर्ण विश्लेषण की विंदु यह है की सहमति का निर्माण हेतु पुंकजीपतियों के द्वारा अपनाई जाने वाली शब्दों का माय जाल क्या है (Gramsci, 1948)[5] । भाषा अपने आप मे ही व्यापक शब्द है। जिसका राजनीति राजनीति से सरोकार के बाद व्यापकता मे और विस्तार आजती है । तथापि इस आर्टिकल के विभिन्न उपविषयों मे वर्गित कर भाषा को हिन्दी भाषा के रूप मे चिहीत कर इसकी अस्मिता पर चर्चा की गई है। अन्य उपविषयों मे भाषा को शक्ति से साथ जोड़ा गया है तथा भारतवर्ष मे और वैश्विक परिदृश्य मे भाषा का प्रश्न कैसे एक राजनीति का मुख्य मुख्य तत्व है,उनके सभी परिप्रेक्ष्यो का विश्लेषण किया गया है ।

राजनीति मे भाषाई अस्मिता एक मुख्य विचार बिन्दु के रूप मे

भाषा तथा बोली के बीच अंतर करना तथा किस मापक के आधार पर भाषा एण्ड बोली का निर्धारण किया जाए यह वर्तमाण समय खुद ही एक राजनीति का विषय है। उदहरणस्वरूप गोवा की भाषा कोंकणी के कई स्क्रिप्ट है जैसे देवनागरी तथा कन्नड, इस परिप्रेक्ष्य मे भाषा को सिर्फ एक क्षेत्र विशेष के आधार पर निर्धारित करना भाषागत पहचान की राजनीति को बढवा प्रदान करती है। भाषा के आधार पर गठित राज्यों के अंदर भी भारत मे भाषाई आधार पर अल्पसंख्यक समूह है। अतः भाषा के आधार पर राज्यों को हिन्दी भाषी या गैर हिन्दी भाषी राज्यों मे विभक्त करने से अल्पसंख्यक समूहों की बोली पर अस्मिता की खतरा उत्पन्न हो

जाती है। अल्पसंख्यक समुदाय की भाषा राजनीति मे एक मत्वपूर्ण मुद्दा होनी चाहिए क्योंकि भारत समावेशी विकास की धारणा से पोषित होता है अतः सबका साथ, सबका विकास और सबका विश्वास भारत की सामाजिक समरसता का मूलमंत्र है।इस मूलमंत्र की प्राप्ति हेतु अल्पसंख्यक भाषाई समूहों की अस्मिता की संरक्षण एवम् संवर्धन राजनीतिकारों पर एक दायित्व बन जाता है। संविधान मे यह प्रावधान है की अल्पसंख्यक अपनी मातृभाषा मे शिक्षा ग्रहण कर सकते है तथा अल्पसंख्यक भाषाई समूह अपनी शिकायतों को अपनी मातृभाषा मे दाखिल कर सकते है । परंतु वास्तविकता यह है की ये सब धरातल पर एक संविधान की भाषा ही बनी हि है, अतः इन परिप्रेक्ष्य से देखे तो भाषा पर राजनीति होना पूर्णतः तार्किक प्रतीत होता है।

प्रोफेसर मौरिस जोंस ने भाषा की राजनीति को इतिहास की घटनाओं मे एक उचित स्थान प्रदान किया है । उनका मानना है की राजनीति तथा भाषा के बीच का संबंध ऐसा प्रतीत होता है की राष्ट्रीय एकता और अखंडता मे यह एक महत्वपूर्ण समस्या प्रतीत होती है । संविधान सभा मे भी भाषा को उपयुक्त स्थान प्रदान किया गया है । प्रारंभ मे संविधान मे कुल 14 भाषये को सम्मिलित किया गया था परंतु वर्तमान मे संविधान मे भाषाएं की कुल सांख्य 22 है। भाषागत राजनीति संविधान मे पूर्व से ही प्रासंगिक रही है। पूर्व मे 15 वर्षों के लिए अंग्रेजी को राष्ट्रीय भाषा के रूप मे स्वीकार किया गया था जिसे बाद मे हिन्दी के द्वारा प्रतिस्थापित करने की योजना थी। परंतु आज तक भाषागत राजनीति के कारण हिन्दी को भारतवर्ष की राष्ट्र भाषा के रूप मे उचित स्थान नहीं प्राप्त हुआ है। वर्तमान सरकार की छम्ब भी दक्षिण के राज्यों मे राजनीति का एक ज्वलंत मुद्दा रहा है। चुनाव का भारतवर्ष मे विशेष महत्व है । चुनाव के समय नेताओं के द्वारा जनता से जुडने का भरसक प्रयास किया जाता है । फलतः भारत के चुनाव मे भाषा की राजनीति सुरू हो जाती है । राजनैठीक दलों के द्वारा भाषा को आधार बनाकर जनता से संपर्क साधने का प्रयास किया जाता है साथ ही साथ भाषा के आधार पर जनता को उकसाने का भी प्रयास किया जाता है। भारत विविधताओं मे एकता का देश है तथापि भारत मे कभी कभी भाषा एकता के सारतत्व को प्राप्त करने मे एक वाधा का काम करती है। दक्षिण के राज्यों तथा उत्तर के राज्यों मे भाषा को लेकर वैमनस्था प्रारंभ से ही कायम है। उतर भारतीय राज्य हिन्दी बहुल राज्य है। जबकि अन्य दक्षिण के राज्यों मे हिन्दी को विशेष प्रसंगिता नहीं प्रदान की जाती है। जिससे दक्षिण के राज्य लोगों के लामबंदिकरण हेतु हिन्दी विरोधी भावना को तबज़ुजों प्रदान करते है । दक्षिण भारत की राजनैतिक दल जैसे द्रविड मुनेंद्र काशगं ने हिन्दी विरोधी राजनीति को हमेशा से प्राथमिकता प्रदान की है। संविधान के भाषा आयोग के विभिन्न सदस्य जैसे डॉक्टर। सुनीति कुमार और डॉक्टर पी . सुब्बा नारायण ने यह माना था की "हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाना दक्षिण के राज्यों पर हिन्दी थोपने जैसा होगा।"(Kaviraj, writing, 2013)[8]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सबसे प्रमुख चुनौती थी भारत की एकता तथा अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखा जाना । परंतु आजादी के बाद भाषा के आधार पर राज्य के निर्माण की राजनीति तेज होने लगी। 1952 मे टेलगु नेता पोट्टी श्री रामलूलु की अनशन मे मृत्यु के पश्चात आंध्र प्रदेश बनाने की मांग तेज होने लगी । 1966 मे पंजाबी बोलने वाले के आधार पर पंजाब तथा हिन्दी बोलने वाले के आधार पर हरियाणा राज्य का निर्माण हुआ । 1960 मे मुंबई का विभाजन हुआ और मराठी बोलने वाले के लिय महाराष्ट्र और गुजराती बोलने वाले के लिय गुजरात बनाया गया । इस तरह से भाषा राजनीति का विषय प्रारंभ से ही है । भाषा के आधार पर राज्य का विभाजन एक विवाद का कारण भी साबित हुआ है। पंजाब और हरियाणा के विभाजन से चंडीगढ़ का अस्तित्व खतरे मे अ गई जिसको लेकर दोनों राज्यों के मध्य विवाद आज भी बना हुआ है । कर्नाटक तथा महाराष्ट्र के बीच बेलगाम आज भी दोनों राज्यों के बीच एक विववाद का कारण है।

भारतीय राजनीति वोट बैंक की राजनीति है। वोटरों को आकर्षित करने के लिय राजनीतिक दलों के द्वारा भाषा के भी प्रयोग उच्च स्तर पर किया जाता है। 1980 के चुनाव के समय भारतीय कॉंग्रेस पार्टी के द्वारा उर्दू को सम्मान जनक स्थान देने वकालत की गई ताकि मुस्लिम अल्पसंख्यक वोटों को आकर्षित किया जा सके । उत्तर प्रदेश की लोकदल की सरकार ने भी 1980 के दशक मे उर्दू को तीसरे भाषा के रूम मे स्कूलों मे अध्ययन को अनिवार्य बना दिया था । भाषाई अल्पसंख्यक की समस्या भारतीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण विषय है। भाषाई समस्या के कारण ही आज तक कोई सर्वमान्य शिक्षा नीति नहीं बन पाई है। भाषये तथा बोलियाँ मे निरंतर हो रही कमी भी एक राजनीति का विषय है।आशा सारंगी का मानना है की अगर भाषाओं तथा बोलियों की सांख्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो यह प्रदर्शित होता है की 1881 के जनगणना मे 237 भाषाओ को चिन्हित किया गया, लिंगग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के 1923 के ऑकरे के अनुसार 179 भाषाओं और 544 बोलियों को चिन्हित किया गया, 1991 मे भाषाओं की संख्या घटकर 114 हो गई है। भाषाओं की संख्या मे हो रही इस तरह की कमी राजनैतिक रूप से विचार विमर्श करने की जरूरत को प्रेरित करती है । उनका मानना है की भाषाओं मे हो रही इस तरह की कमी का मुख्य कारण 1951 से ही "मातृभाषा की राजनीति" रही है (Sarangi, 2008)[11]। सुदीप्ता कविराज का मानना है की जब व्यक्ति की पहचान उनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा के आधार से की जाती है तो एकता की भावना पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है जो देश की एकता के लिय चुनौतीपूर्ण हो जाता है (Kaviraj, 2009)[7]।

सुमुथि रामस्वमी का मानना है की भारत मे संस्कृत कमिशन के आधार पर संस्कृत को संविधान की 8वी अनुसूची मे शामिल करना भारतीय अतीत को राष्ट्रवादी झलक देने की प्रयश थी। वास्तविकता यह थी की संस्कृत की तुलना मे अधिक बोली जाने वाली भाषये जैसे अवधि, तुलु और मिज़ो को आठवी अनुसूची मे शामिल नहीं किया गया है। सुदीप्ता कविराज इस परिप्रेक्ष्य मे बोलते है की अल्पसंख्यक के द्वारा भाषाई मानद लोकतंत्र पर एक अतिरिक्त दबाब है (Ramaswamy, 1997)[10]।

भाषा जनित हिंसात्मक राजनीति

भाषा राजनीति के साथ इस प्रकार से सरोकार स्थापित कर लिया है की कभी–कभी राजनीति का कट्टर रूप हिंसात्मक रूप भी देखने को मिलता है। उतर दक्षिण के बीच भाषाई मतैक्य उग्र रूप भी धारण कर लेता है। 1965 मे मद्रास मे द्रवीडियन के द्वारा हिन्दी विरोधी विद्रोह मे कई लोगों की जान चली गई। स्वतंत्रता बाद भाषा जनित राज्य के निर्माण से ऐसा माना जाने लगा राज्य

की विघटनवाद रूपी समस्या समाप्त हो जाएगी परंतु यह समस्या बनी ही रही । 1950 के दशक मे भाषा के आधार पर तेलुगु बहुल आंध्रप्रदेश के निर्माण से राज्य की समस्या का समाधान नहीं हुआ क्योंकि तेलुगु बहल राज्य की राजधानी मे लगभग 40 % लोग उर्दू बोलने वाले थे । सामाजिक, आर्थिक, एवम् भाषाई असमानता ने एकता स्थापित नहीं कर पाई । भले ही पूरे राज्य मे उर्दू अल्पसंख्यक था लेकिन भाषयी अस्मिता के संरक्षण की धारणा मजबूत थी, फलत: आंध्रप्रदेश मे 1970 के दशक मे की दंगे हुए है। भारत के उतर पूर्व राज्य असम भी भाषाई दंगे का शिकार होता रहा है । असम मे बंगाली बोलने वाले मुस्लिम की संख्या भी 33 % से अधिक है जिसके कारण से वहा 1971 मे भी विभाजन के समय दंगे हुय है।

भाषा और सामाजिक पदसोपनीयता की राजनीति

भाषा मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनाता है, भाषा ही है जो मनुष्य को जानवर से अलग करता है। परंतु भाषा के साथ ही समाज मे लोगों के स्तर का भी निर्धारण होने लगा है इसलीय समाज मे पदसोपनीयता उत्पन्न हो गया है। ऐसा कहा जाता है की 2 कोश पर पानी बदलता है तथा 4 कोश पर वाणी। भारत गावों का देश है तथा सबसे अधिक भाषाई विविधता गावों मे ही होती है । इसलीय पदसोपाणिता भी गाव मे अधिक होता है। अभी भी ऐसा माना जाता है की अंग्रेजी विशिस्ट वर्गों की भाषा है । अंग्रेजी के संदर्भ मे आज लोगों के बीच मे भिन्न मतैक्य है । जब लोग हिन्दी जैसे भाषये की तरफ मुड़ने का सोचते है तो अंग्रेजी समर्थकों द्वारा विरोध किया जाता है। विरोधियों का मानना है की अंग्रेजी भाषा के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व के साथ जुड़ा जा सकता है । ब्रिटिश के द्वारा दिया गया एक प्रकार का उपहार है। अगर इस परिप्रेक्ष्य को विश्लेषित करे तो यह कहना तर्कसंगत होगा की अंग्रेजी भाषा को सिर्फ संचार तथा संवाद का माध्यम है तो ठीक है,लेकिन अगर अग्रेजी समाज मे पदसोपनीयता का निर्माण करता है तो यह पूरे समाज की सद्भावना, समरसता और सहिष्णुता के लिय चुनौती बन सकता है (Language, Politics and Social Issues in India, 2015)[9] ।

भाषा सिर्फ व्यक्तिगत पहचान को ही सुनिश्चित नहीं करती है जबकि भाषा के माध्यम से सामूहिक पहचान भी निर्धारित होती है। कुछ क्षेत्रीय भाषये जैसे बंगाली, पंजाबी, मराठी, गुजराती कुछ खास तरह की खान–पान, नाच–गान, पोशाक को भी निरूपित करती है। इन क्षेत्रीय भाषा को औपनिवेशिक समय से ही अन्य की तुलना मे अंग्रेज भी प्राथमिकता दिए थे ।इस कारण से इसका प्रभाव भी अन्य की तुलना मे अधिक रहा है ।

वैश्विक पटल और भाषा की प्रश्न

वैश्विक पटल और हिन्दी भाषा की अस्मिता

सभ्यता की पहचान से होती है, इसिलिय सभ्यता को अंत करने हेतु वर्चस्ववादीयों ने भाषा को ही निशान बनाया है । हिन्दी भाषा की पहचान आदिकाल से ही है । साम्राज्यवादी शक्तियों ने हिन्दी भाषा पर भी प्रहार किया परंतु हिन्दी भाषा यथावत बनी रही और यह बिखरी नहीं ।सामयिक समय मे हिन्दी भाषा अन्य वर्चस्ववादी भाषाओं की तरह विश्व के मानस पटल पर अमित छाप छोड़ रही है । हिन्दी की व्यपकता का प्रमाण इन बातों से लगाया जा सकता है की हिन्दी सिर्फ एकमात्र भाषा नहीं है बल्कि हिन्दी बोलियों का समुचचय है । तथापि कुछ चिंताएं है जिसे दरकिनार नहीं किया जा सकता है। वर्तमान समय का युग वैश्वीकरण का युग है । वैश्वीकरण के इस युग मे तकनीकी और आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस का समय आ गया है । जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न वैश्विक मंचों पर भी अंग्रेजी जैसे भाषाओं या अन्य वर्चस्ववादी भाषाओं को अधिक प्राणसांगिकता दि जा रही है । यदपि पूर्ण रूप से यह कहना तार्किक नहीं होगा क्योंकि भूमंडलीकरण तथा वैश्वीकरण के कारण है हिन्दी भाषा भी क्षेत्रीयता की परिधि से बाहर निकल कर वैश्विक भाषा के रूप मे अपनी पहचान को स्थापित किया है (सिंह, 2020)[13] ।

सामयिक विश्व रूपी रथ भूमंडलीकरण और वैश्वीकरण रूपी वाहक द्वारा संचालित हो रही है। इस वैश्वीकरण के युग मे विश्व के कई महासक्तियों जैसे अमेरिका, रूस, चीन, ब्रिटेन आदि देशों द्वारा अपनी आर्थिक योजनाओं को फलीभूत करने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इस प्रकार की आर्थिक योजनाओ के लिय बाजार की उपस्थिति एक अनिवार्य शर्त है । इसके लिय महासक्तियों के द्वारा तीसरी दुनिया के देशों की तरफ मुख किया जाता है। अतः बेहतर परिणाम हेतु स्थानीय भाषा की समझ होना एक बेहतर रणनीति है इसलीय भी भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देशों की भाषा को वैश्विक महाशक्तियों के एक विशेष स्थान व तबाजजों जी जाती है। अगर अलग परिप्रेक्ष्य से देखा जाए तो यह भी विश्लेषित किया जा सकता है की इन बाजारी तत्वों ने मीडिया, विज्ञापनो ने हिन्दी भाषा की अस्मिता को क्षीण करने का भरसक प्रयास किया है अतः वैश्विक मंच पर भाषा की अस्मिता का संरक्षण एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है (सिंह, 2020)[13] ।

भारतीय प्रवासी वर्तमान समय मे विश्व के सभी देशों मे विद्यमान है। जो भारतीय भाषा, संस्कृति, विचार तथा व्यवहार के वाहक है। ऐसा माना जाता है की व्यक्ति अपने परिवेश की उपज होती है और भाषा उस परिवेश के निर्माण मे अग्रणी भूमिका निर्वहन करता है । तथा यह भी कहा जाता है की व्यक्ति भले ही किसी परिवेश मे अपनी अवस्थतिति को स्वीकार कर ले परंतु उसकी अपनी भाषा या बोली व्यक्ति की चेतना मे सर्वदा विद्यमान होती है।इस तहत यह कहा जा सकता है की प्रवासी भारतीय भारत की भाषा तथा बोली को विश्व के मानस पटल पर अंकित करती है जो विश्व के अन्य भाषों के लिय भी समंगिकरण का अवसर प्रदान करती है। भारतीय भाषा की प्रांसगिता के कारण ही अमेरिका जैसे देश के पूर्व राष्ट्राध्यक्ष डोनाल्ड ट्रम्प ने भी कई बार भारतीयों को सम्बोधन करने हेतु हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है।

वैश्विक पटल और भाषा की राजनीति

भाषा की राजनीति सिर्फ स्थानीय ही नहीं होती है बल्कि भाषागत राजनीति का सरोकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी होता है । नोम चोमसकी ने अपनी पुस्तक मे लिखा है की चुनाव के समय भाषा मे करेंकी के बराबर दम होता है (Chomsky, 1988)[3] । BBC के पूर्व डायरेक्टर जर्नल का मत है की भाषा राजनीति और लोकतंत्र मे आधारशिला का कार्य करती है। अगर लोकतत्र मे भाषा का क्षरण होता है तो इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। राजनीतिक रूप से भाषा के प्रभाव कम होने सिर्फ एक बेहतरीन भाषण ही सुनने को नहीं मिलता है बल्कि बहोत कुछ खोना पड़ता है । एतिहासिक रूप से जब रोम का विध्वंस हुआ तथा रोम मे अधिनायकवादी सरकार की स्थापना हुई तो जनता तथा नेता के मध्य भाषाई संबंध संतुलित नहीं रहा परिणामतः रोम की सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था ही ध्वस्त हो गई (Thompson, 2018)[12]। भाषगत संबंध क्षीणता के कारण पश्चिमी राज्यों मे सामाजिक ह्रास की प्रक्रिया 2016 से ही प्रारंभ हो गई जब वह की सरकार ने राजनीति के मूल तत्वों समरसता, सहिष्णुता तथा सद्भावना को छोड़कर कट्टरवादिता को अपना लिया । वोटरों को लुभाना राजनीति मे प्राथमिकता होती है इसलीय भाषा का प्रयोग करके लोक लुभावने नारे का भी सृजन किया जाता है । अमेरिका के चुनाव मे डोनाल्ड ट्रम्प द्वारा "मेक अमेरिका ग्रेट अमरीका" का नारा दिया गया । जो विश्व मंच पर अमेरिका की मर्यादा को सुशोभित करने वाला पंचलाइन प्रतीत होता है।

वैश्विक राजनीति मे शक्ति का अर्थ सैन्य शक्ति, आर्थिक शक्ति के रूप मे माना जाना जाता है। परंतु वास्तव मे सामयिक राजनीति मे भाषा के प्रयोग एक महवपूर्ण शक्ति है। दक्षिण सीरिया मे कुर्द

लोग, अमेरिकी राष्ट्रपति तथा तुर्की राष्ट्रपति के एक बीच एक फोन कॉल की संवाद से डर जाते है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति मे भाषा राज्य की लक्ष्य, विचार तथा राज्य की सोच को प्रदर्शित करता है । भाषा तथा शक्ति के मध्य संबंध इस अर्थ मे भी समझ जा सकता है की भाषा का प्रयोग कर कोई राज्य किस प्रकार एक निश्चित लक्ष्य तक पहुचता है। जैसे दृ अगर किसी राज्य पर आतंकवादी हमला होती है तो राजनीतज्ञ भाषा के प्रयोग द्वारा ही लोगों के मन मे जोश, आक्रोश, डर पैदा कर सकता है । भाषा का प्रयोग राज्यों के मध्य एक शीत युद्ध का काम करता है जो वास्तव मे युद्ध ना होकर एक भाषाई युद्ध होता है । जैसे दृ अमेरिकी पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प और उतरी कोरियाई नेता किम जोंग के बीच नूक्लीअर बम को लेकर हो रही बहसबाजी के माध्यम के दोनों देश डिटरेन्स उत्पन्न करने का प्रयास कर रहे थे (Dyfri, 2019)[4] ।

निष्कर्ष

अरस्तू का मानना है की मनुष्य एक सामाजिक और राजनैतीक प्राणी है। भाषा जिस प्रकार भावनाए, हास परिहास, संवाद द्वारा सामाजिक जीवन को संयोजित करती है ठीक उसी प्रकार भाषा मे बेहतरीन सृजनात्मक शक्ति होती है जो राजनीति को पोषित तथा संरक्षित करती है। राजनीति मे भाषा का मत्व अधिक हो जाता है, इसलीय भाषा राजनीति का एक विषय बन जाता है । प्रोफेसर रसिउद्दीन खान का मानना है की भारत विविधताओ मे एकता का देश है क्योंकि भारत मे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, निर्जातीय रूप से विवधता होते हुय भी भारत मे समरसता और सहिष्णुता विद्यमान है। आजादी के बाद से ही राज्यों के निर्माण मे भाषा को प्राथमिकता प्रदान किया गया। भाषागत राजनीति पहचान की राजनीति का द्योतक बन गया फलतः भाषा की राजनीति हिंसात्मक राजनीति भी बन गई । तथैव वर्तमान समय मे भाषा राजनीति मे सिर्फ एक संचार और संवाद का साधन ही नहीं बल्कि भाषा को एक शक्ति से जोड़कर देखा जाता है। जो राज्य की राजनीति के साथ साथ वैश्विक राजनीति मे भी एक शक्ति के रूप मे भूमिका अदा करता है। इसलीय भारतवर्ष की वर्तमान राजनीति भी सबका साथ, सबका विकाश और सबका विश्वास के साथ संपोषित हो रही है ताकि सभी का समावेशी विकाश हो और भारत की विश्व गुरु बनने की संकल्पना साकार हो ।

संदर्भ

1. Ali DS. The Language of Politics, 2011.
2. Bhardwaj A. The Indian Express, 2023. Retrieved from https://indianexpress.com/article/opinion/language-politics/
3. Chomsky N. Language and Politics. Black Rose Books, 1988.
4. Dyfri G. Language in International Politics, 2019. Retrieved from Foreign Affairs Review : https://www.foreignaffairsreview.com/home/language-in-international-politics
5. Gramsci A. Prison Notebooks, 1948.
6. Joseph JE. Language and Politics. Edinburgh University Press, 2006.
7. Kaviraj S. In Language and Politics in India. Oxford University Press, 2009.
8. Kaviraj S. writing, speaking,being: language and the historical formation of identities in india, 2013.
9. Language, Politics and Social Issues in India, 2015. Retrieved from ttps://factsanddetails.com/india/People_and_Life/sub7_3b/entry-4144.html
10. Ramaswamy S. Passions of The Tounge: Language Devotion in TamilI India. University of California, 1997.
11. Sarangi A. In Language and Politics in India. USA: Oxford University Press, 2008.
12. Thompson M. Language Politics: How Politicians Use Words to Shape Elections, 2018.
13. सिंह ध प, 2020. Retrieved from जनसत्ता: https://www.jansatta.com/politics/jansatta-editorial-column-increasing-dominance-of-hindi-language/1310073/